द्वादशज्योतिर्लिङ्ग

'संसरतीति संसार:' अर्थात् जब तक अज्ञान है तब तक निरन्तर परिवर्तनशील इस दृश्यमय जगत् को संसार कहते हैं। इस संसार में निरन्तर परिवर्तन का अनुभव करनेवाले को जीव कहते हैं जो कि विभिन्न प्रकार के शरीरों को प्राप्त कर सुख-दु:ख भोगते रहता है। इस शरीर को भी योनि कहते हैं। योनि का अर्थ है कारण व साधन, अर्थात् सुख-दु:ख के भोग का कारण व साधन। वह योनि कुल ८४ लाख हैं। जैसा कि विष्णु पुराण में कहा है-

'जलजा नवलक्षाश्च दशलक्षाश्च पक्षिण:।
कृमयो रुद्रलक्षाश्च विंशलक्षा गवादय:।।
स्थावरास्त्रिंशलक्षाश्च चतुर्लक्षाश्च मानव:।
पापपुण्यं समं कृत्वा नरयोनिषु जायते।।'

(जल में पैदा होनेवाले ९ लाख, पक्षियाँ १० लाख, कृमियाँ ११ लाख, गो आदि पशु २० लाख, पेडादि स्थावर ३० लाख, और देवगन्धर्वमनुष्यादि ४ लाख। कुल ८४ लाख)।

इन समस्त प्रकार के जीवों में से मानवयोनि ही श्रेष्ठ है क्योंकि इसी में विकसित विचारशील बुद्धि है। ४ लाख मानवयोनियों में भी पृथिवी पर जन्म लेनेवाले नरयोनि (मनुष्य) ही सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि पुरुषार्थ करने का सामर्थ्य और अवसर इसी में संभव है। पुरुषार्थ क्या है ? 'पुरुषेण साध्योऽर्थो अभिलाषाविषय: प्रयोजनं वा पुरुषार्थ:।' अर्थात् पुरुष के द्वारा परिश्रम से संपादन करने योग्य अपना अभीष्ट वस्तु अथवा प्रयोजन को पुरुषार्थ कहते हैं। वह कुल चार ही है - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। 'श्रुति: स्मृति: सदाचार: स्वस्य च प्रियमात्मन:।' इत्यादि मनुस्मृति के वचनानुसार वेद एवं स्मृति में विहित तथा अनादि परम्परा से आचरित सदाचार और सभि केलिये प्रिय व अनुकूल है जो, उसे धर्म कहते हैं। ठीक इनके विपरीत, जो वर्ज्य हैं वह अधर्म है। अर्थ यानि विभिन्न प्रकार के धन। विषयों को भोगने की कामना अथवा इच्छा को काम कहा है। जन्म मरण के चक्कर से

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

छुटकारा पाना, त्रिविध ताप की निवृत्ति, अविद्या की निवृत्ति, जीवब्रह्मैक्यत्वानुभूति इत्यादि जीवन के वास्तविक उद्देश को मोक्ष कहते हैं। शास्त्रों में इन पुरुषार्थों को हासिल करने केलिये कर्म, भक्ति और ज्ञान का उपदेश दिया गया है। हर मनुष्य की योग्यता एवं सामर्थ्य अलग-अलग है, अभिलाषायें भिन्न-भिन्न है, परिवेश और परम्परा जिसमें जी रहा है वह भी पृथक्-पृथक् है। इसी को अधिकारी भेद कहा जाता है। अधिकारी कुल तीन प्रकार के हैं - उत्तम, मध्यम और मन्द। उत्तम अधिकारी केलिये समाधि का अभ्यास, ध्यानयोग, क्रियायोग, नादयोग, ज्ञानयोग, इत्यादि साधनायें बताई गई है। मध्यम अधिकारी केलिये अष्टांगयोग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार और धारणा का अभ्यास अथवा उपासना, भक्तियोग आदि बताये गये हैं। मन्द अधिकारी और सामान्य लोगों केलिये सकाम कर्मयोग एवं निष्काम कर्मयोग का विधान है, जिसके अन्तर्गत मूर्तिपूजा, जप, तप, व्रत, स्तोत्रादि का पाठ इत्यादि हैं।

लेकिन कोई भी अधिकारी हो और कोई भी साधना हो सभी का लक्ष्य है मोक्ष पाना। मूर्ति, लिङ्ग, शालग्राम, आदि उसी परमात्मा का प्रतीक है जिसे वेदान्त (उपनिषदों) में ब्रह्म, पुरुष, आत्मा इत्यादि शब्दों से कहा गया है। इसलिये मनुष्य के असली स्वरूप (जीवब्रह्मैक्यत्वानुभूति = मोक्ष) को अनुभव कराना ही प्रयोजन है जिनका, उन्हें पुरुषार्थ कहा है। अत: धर्म, अर्थ और काम का लक्ष्य है मोक्ष जिससे अविद्या (अज्ञान और उसका कार्य - मैं जीव हूँ, मैं परमात्मा से भिन्न हूँ, इत्यादि भ्रान्तियों) की निवृत्ति होती है। फलत: जन्म मरण का चक्कर से छुटकारा प्राप्त होता है।

शास्त्रों में विहित अनेक साधनों में से निष्काम कर्मयोग से अपने अन्त:करण के स्थूलवासनाओं का नाश, निष्काम भक्तियोग से सूक्ष्मवासनाओं का नाश करके ज्ञानयोग द्वारा अविद्या का नाश पूर्वक मोक्ष प्राप्त होता है। यह कैसे? मनुष्य के पास तीन प्रमुख शक्तियाँ है - शारीरिक, हार्दिक (भावनात्मक) और मानसिक, इनके संतुलन पूर्वक आध्यात्मिक उन्नति केलिये प्रयोग करने हेतु

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

क्रमशः तीन योग का विधान है। मनुष्य के हृदयरूपी खेती को निष्कामकर्मयोग से जोतकर स्थूल वासनाओं की सफाई करके, ज्ञानयोग से ज्ञानरूपी बीज बोकर भक्तियोगरूपी जल से सींच दें तो मोक्षरूपी फसल मिलेगा। लेकिन इन तीनों योगों को साथ-साथ अपने जीवन में उतारना सब से संभव नहीं है। अतः मनुष्यों में विद्यमान इन तीनों शक्तियों के संतुलन पूर्वक आध्यात्मिक उन्नति केलिये इन तीनों योगों का साथ-साथ प्रयोग करने का सबसे सरल उपाय के रूप में ऋषियों ने मूर्तिपूजा का विधान किया है। अतः अपने-अपने भावनाओं के मुताबिक मनुष्य विभिन्न देवी देवताओं के मूर्ति की पूजा करता है। उनमें से लिङ्ग भी एक मूर्ति है, जो परब्रह्म परमात्मा का प्रतीक है।

हाथ-पैर-मुख आदि रहित इस पिंडाकार मूर्ति को लिङ्ग क्यों कहते हैं? 'लीनं अज्ञानवशादावृतमिव तिरोहितमिव वा पदार्थं गमयति बोधयति प्रकाशयतीति लिङ्गं' - अज्ञान के कारण ढका हुआ जैसा अथवा छिपा हुआ जैसा पदार्थ को बोध अर्थात् अनुभव कराता है अथवा प्रकाशित करता है जो उसे लिङ्ग कहते हैं। अतः अज्ञान के वजह से हमारे हृदयरूपी गुफा में छिपि हुई जैसी आत्मा ज्ञान द्वारा प्रकाशित होता है जिसकी पूजा से उसे लिङ्ग कहते हैं। कृत्रिमरूप से तैयार किये गये लिङ्ग अनेक प्रकार के हैं - पार्थिव (मिट्टि), लकड़ी, ताम्बा, पीतल, पंचलौह, अष्टधातु, कांसा, चांदी, सोना, पारा, पत्थर आदि। यद्यपि प्राकृतिकरूप से नर्मदा नदी के धावलीकुण्ड में तैयार नर्मदेश्वरलिङ्ग में शास्त्र के कथनानुसार परमात्मा का नित्य वास मानने के कारण और प्राणप्रतिष्ठा आदि कि अपेक्षा न होने से, उसको विशेष महत्त्व दिया गया है। किन्तु पारा से निर्मित लिङ्ग को उससे भी श्रेष्ठ बताया गया है तथापि स्वयं परमात्मा किसी देवता, ऋषि, भक्त आदि पर कृपा करते हुए प्रकट होकर जो लिङ्ग के रूप में स्थित हो गये हैं वह तो सर्वश्रेष्ठ है, उसी को ज्योतिर्लिङ्ग कहा जाता है।

उन्हें ज्योतिर्लिङ्ग क्यों कहते हैं? 'ज्योतिश्च तल्लिङ्गं चेति ज्योतिर्लिङ्गं।' वह परमात्मा का वास्तविक स्वरूप ज्योतिर्मय स्वप्रकाश है। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा है - 'योऽयं विज्ञानमयः

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

प्राणेषु हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुषः'(४.३.७) और 'अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिः'(४.३.९) तथा मुण्डकोपनिषद् में - 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्र तारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति(२.२.१०)।।' ऐसे ज्योतिर्मय स्वप्रकाश स्वरूप परमात्मा का प्रतीक होने से ज्योतिर्लिङ्ग कहा जाता है। वे कुल १२ हैं, जिनके नाम एवं स्थान का संग्रह इस स्तोत्र में किया गया है -

'सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनं।
उज्जयिन्यां महाकालं ओंकारममलेश्वरं।।
परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशंकरं।
सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने।।
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गोमतीतटे।
हिमालये तु केदारं घृष्णेशं च शिवालये।।
एतानि ज्योतिर्लिङ्गानि सायं प्रातः पठेन्नरः।
सप्तजन्म कृतं पापं स्मरणेन विनश्यति।।

१. गुजरात (सौराष्ट्र) का द्वारिका में सोमनाथ।
२. आन्ध्रप्रदेश का श्रीशैलम् में मल्लिकार्जुन।
३. मध्यप्रदेश का उज्जैन में महाकाल।
४. मध्यप्रदेश का ओंकारेश्वर में ओंकारेश्वर और ममलेश्वर।
५. महाराष्ट्र का परळी अथवा झारखण्ड का डुमका जिले का देवघर अथवा हिमाचल प्रदेश का परडि में वैद्यनाथ।
६. महाराष्ट्र का (डाकिनी ग्राम) भीमाशंकर में भीमाशंकर।
७. तामिलनाडु का (सेतुबन्ध) रामेश्वरम् में रामेश्वर।
८. महाराष्ट्र का औंडा में अथवा गुजरात का सूरत के पास नागेश्वर।
९. उत्तरप्रदेश का वाराणासी में विश्वेश (विश्वनाथ)।
१०. महाराष्ट्र में नासिक के पास त्र्यम्बकेश्वर।
११. उत्तराखण्ड में केदारनाथ।
१२. महाराष्ट्र का औरंगाबाद में घृष्णेश्वर है।

इन ज्योतिर्लिङ्गों के नाम और उनके स्थान के नाम का अर्थ पर विवेचन करने से स्पष्ट प्रतीत होता है की इनका

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

गहरा संबंध हमारे शरीर में विद्यमान चक्रों के साथ है। जिन लोगों में अन्तर्यात्रा करके चक्रों को जाग्रत कर ज्योतिर्मय परब्रह्म का अनुभव करने की क्षमता नहीं है, उन लोगों केलिये बहिर्यात्रा द्वारा विभिन्न स्थानों में प्रकट होकर स्थिरीभूत ज्योतिर्लिङ्गों के दर्शन पूजन आदि का विधान किया गया है। बहिर्यात्रारूपी तप से अन्त:करण कुछ शुद्ध होने पर अन्तर्यात्रा संभव होता है।

अब योग के दृष्टि से स्थानों के नाम और ज्योतिर्लिङ्गों के नामों का चक्रों के साथ संबंध के बारे में संक्षिप्त विचार को व्यक्त किया जाता है क्योंकि यह उक्ति प्रसिद्ध है -'यथा पिंडे तथा ब्रह्माण्डे, यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे।' श्लोक में जो क्रम है वह छन्द:शास्त्र को ध्यान में रखते हुए है, किन्तु शरीरस्थ चक्रों का क्रम के अनुकूल ज्योतिर्लिङ्गों का क्रम को स्वीकार करके विचार अभिव्यक्त किया जा रहा है।

१. मूलाधार चक्र में डाकिनी देवी सहित बालब्रह्मके रूप में विराजमान परमात्मा को 'नागेशं दारुकावने' से दर्शाया है। दारुका का अर्थ है कठपुतली। 'दारुका इव स्वयं स्थिर: सन् वनति भजतीति दारुकावनं' अर्थात् कठपुतली के समान स्वयं स्थिर रहते हुए कामवासना प्रधान होने पर भी ईश्वर की प्रेरणा से भजन करने का स्थान है मूलाधार। पृथिवी तत्त्व का द्योतक होने के कारण नागेश है। ' न गच्छतीति अग:, न अग इति नाग:, तस्येश: नागेश:।' कुण्डलिनीशक्ति का स्वामी है नागेश। नाग का अर्थ है निरन्तर परिणामी चलस्वभाव क्रियाशील, उसका ईश है नागेश। तैत्तरीय उपनिषद् २.८.१-४ और बृहदारण्यकोपनिषद् ४.३.३३ के आनन्द मीमांसा प्रकरण में मनुष्य द्वारा भोग्य सार्वभौम आनन्द से लेकर स्वरूपभूत आनन्द तक १२ स्तर का वर्णन है, जिनका प्रतीक ये १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं। अत: मूलाधार पर विजय पाने और एक मनुष्य द्वारा भोग्य सार्वभौम आनन्द को प्राप्त करने केलिये साधक स्वयं स्थिर रहकर

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

ईश्वर की प्रेरणा से बालब्रह्मरूपी नागेश्वर का पूजा, ध्यान, आदि करें।

२. स्वाधिष्ठान चक्र में साकिनी देवी सहित विष्णु के रूप में विराजमान परमात्मा को 'डाकिन्यां भीमशंकरं' से दर्शाया है। स्त्रीसपेरा अर्थात् सपेरा कि पत्नी जो स्वयं सांप को पकडने में कुशल है, उसे डाकिनी कहते हैं। 'बिभेति अस्मादिति भीमः तं अथवा भीमा = पार्वती नदीविशेषो वा तां शं करोतीति भीमशंकरः।' अर्थात् जिससे सब भयभीत हो उसे भीम कहते हैं, उसको अथवा पार्वती देवी और एक नदी का नाम है भीमा, उनका अभीष्ट दान द्वारा शान्त करता है जो उसे भीमशंकर कहा जाता है। जल तत्त्व का प्रतीक होने से और सबको प्यास के कारण उत्पन्न बेचैनी को शान्त करने के कारण भीमशंकर हैं। अतः स्वाधिष्ठान पर विजय पाने केलिये एवं स्त्रीसपेरे के समान निर्भय होकर भूख-प्यासरूपी सांप को वश में कर लेने केलिये और एक मनुष्यगन्धर्व द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने की सामर्थ्य प्राप्त करने केलिये विष्णुरूपी भीमशंकर का पूजन, ध्यान, आदि करें।

३. मणिपुर चक्र में लाकिनी देवी सहित रुद्र के रूप में विद्यमान परमात्मा को 'सेतुबन्धे तु रामेशं' शब्दों से बताया है। 'सेतोर्बन्धनं क्रियते इति सेतुबन्धः, सोऽस्मिन्नस्तीति सेतुबन्धः।' अर्थात् दो तटों को परस्पर जोडने की क्रिया जिसमें हो उसे सेतुबन्ध कहते हैं। जब स्त्रीगर्भिणी हो तब दो जीवों (माँ और बच्चा) को नाभि द्वारा जोडकर जन्मरूपी लक्ष्य को प्राप्त करता है, अतः नाभि हि सेतुबन्ध है। 'रामेण पूजितो ईशः रामेशः' अर्थात् रुद्र देवता है। अग्नि तत्त्व का प्रतीक और जन्म के कारण कर्मों का प्रेरक होने से रुद्र हैं। अतः मणिपुर चक्र का भेदन करने केलिये तथा एक देवगन्धर्व द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने का सामर्थ प्राप्त करने रुद्र रूपी रामेश्वर का पूजा, ध्यान, आदि करें।

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

४.अनाहत चक्र में काकिनी देवी के साथ ईश के रूप में विद्यमान परमात्मा को 'ओंकारममलेश्वरं' शब्द से कहा है। 'ओं इत्यक्षरस्याकार इवाकारो यस्य पर्वतस्य स ओंकारपर्वतः, तत्राविर्भूत ईश्वर ओंकारेश्वरः। सैव वर्षार्तौ नद्याः पारं गन्तुं ये न शक्नुवन्ति तेषां भक्तानां पूजाद्यर्थं पश्चिमतटे पुनराविर्भूतो ममलेश्वरः।' अर्थात् ऊँ इस अक्षर के आकृति के समान आकृति है जिस पहाड की उसे ओंकारपर्वत कहा जाता है, उस पहाड पर आविर्भूत होकर स्थिर हुए उस परमामा को ओंकारेश्वर और वर्षा ऋतु में जो नर्मदा नदी को पारकर ओंकारपर्वत पर न जा सके उन भक्तों पर कृपा करते हुए पुनः पश्चिम तट पर प्रकट हुए उसी ओंकारेश्वर भगवान् को ममलेश्वर नाम से पूजा जाता है। कुछ लोग अमलेश्वर भी कहते हैं। 'मम अभीष्टं लाति य ईश्वरः सो ममलेश्वरः अथवा अमलानां शुद्धान्तःकरणवतां भक्तानां ईश्वरोऽमलेश्वरः।' अर्थात् जो मेरे सकल अभीष्ट को लाकर देते हैं वह ईश्वर ममलेश्वर अथवा मल (छल, कपट, ढोंग, इत्यादि) से रहित शुद्धमनवाले भक्तों का ईश्वर अमलेश्वर है। वायु तत्त्व का प्रतीक होने से और हृदय में आश्रित समस्त कामनाओं का पूरक होने से अनाहत चक्र को वश में करने केलिये तथा चिरलोकवासी एक पितृदेव द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने की सामर्थ्य प्राप्त करने ईशरूपेण स्थित ओंकारेश्वर एवं ममलेश्वर/अमलेश्वर की पूजा, ध्यान, आदि करें।

५.अनाहत चक्र से जुडा हुआ है हृदय चक्र, जिसमें राकिनी देवी के साथ साम्बशिव के रूप में विराजमान परमात्मा को 'श्रीशैले मल्लिकार्जुनं' शब्दों से कहा है। 'श्रीः सर्वैश्वर्य संपन्नः, शैलः शिलाः शालग्रामवत् श्रेष्ठाः सन्ति अस्येति शैलः, श्रीश्चासौ शैलश्चेति श्रीशैलः। मल्लिकाया अनन्यभक्ति समारूढाया अर्जुनः सरलभावत्वं दृष्ट्वा प्रीतो यः सो मल्लिकार्जुनः।' वायु तत्त्व का विशिष्टरूप प्राण तत्त्व का प्रतीक होने से और प्राणोपासना से प्राप्य सर्वैश्वर्य का संबंध

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

के कारण हृदय चक्र पर विजय पाने केलिये तथा एक आजानजदेव द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने की सामर्थ्य प्राप्त करने साम्बशिवरूपेण स्थित मल्लिकार्जुन का पूजा, ध्यान, आदि करें।

६. विशुद्धि चक्र में शाकिनी देवी सहित सदाशिव के रूप में विद्यमान परमात्मा को 'उज्जयिन्यां महाकालं' शब्दों से कहा है। 'सद्गुणानामुत्कृष्टो जयो दुर्गुणानां पराजयश्च भवितुं शीलं यस्यां सोज्जयिनी। महान्श्चासौ कालश्चेति महाकालः।' सद्गुणों का विजय और दुर्गुणों का पराजय करने का स्वभाव है जिसमें उसे उज्जयिनी कहते हैं। शरीर में अन्नादि का परिणामस्वरूप उत्पन्न होनेवाले कालरूपी विष का संहारक होने के कारण महाकाल हैं। आकाश तत्त्व का प्रतीक है। मानुषी मृत्यु पर विजय पाकर एक कर्मदेव द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने की सामर्थ्य इसी चक्र के जागरण से प्राप्त होता है। अतः इस चक्र पर विजय पाने अर्थात् इस चक्र को जाग्रत करने अथवा इस चक्र का भेदन करने केलिये सदाशिवरूपेण स्थित महाकाल का पूजा, ध्यान, आदि करें।

७. ललना चक्र में याकिनी देवी सहित विशुद्धशिव के रूप में विद्यमान परमात्मा को 'सौराष्ट्रे सोमनाथं च' से दर्शाया गया है। 'सु शोभनः राष्ट्रः (राषते प्रकाश्यते आत्मा येनोपाधिना स राष्ट्रः=शरीरं), तत्र भवः सौराष्ट्रः। सोमः = चन्द्रः तस्य नाथः = आरध्यदेवः अथवा सोमोऽमृतः सश्चासौ नाथश्च = स्वामी इति सोमनाथः।' इस सुन्दर मानव शरीरमें रहते हुए ही अपने वास्तविक स्वरूपभूत आत्मा का अनुभव किया जा सकता है, अतः इसे सुराष्ट्र कहते हैं, इसमें विद्यमान प्रकाशस्वरूप चैतन्य आत्मा को सौराष्ट्र कहते हैं जो की चन्द्रदेव का आराध्य होने से अथवा अमरणधर्मा होते हुए जो इस संसार का स्वामी है उसे सोमनाथ का जाता है। नाद, बिंदु, कला और इन तीनों से अतीत - ये ४ शब्दब्रह्म का स्वरूप है। इनमें से नाद तत्त्व

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

का प्रतीक है यह चक्र। इस चक्र के जागरण से सापेक्ष अमरत्व विशिष्ट एक देवता अग्न्यादि के द्वारा भोग्य आनन्द को भोगने की सामर्थ्य प्राप्त होता है। अत: ललना चक्र पर विजय पाने केलिये विशुद्धशिवरूपेण स्थित सोमनाथ का पूजा, ध्यान, आदि करें।

८. आज्ञा चक्र में हाकिनी देवी के साथ परमशिव के रूप में विराजमान परमात्मा को 'वाराणस्यां तु विश्वेशं' से बताया गया है। जबालोपनिषद् का दूसरे मंत्र में स्पष्ट कहा है- 'का वै वरणा का वा नाशीति। सर्वान्निंद्रियकृतान्दोषान् वारयतीति तेन वरणा भवतीति, सर्वान्निंद्रियकृतान्पापान् नाशयतीति नाशी भवतीति। कथं चास्य स्थानं भवतीति। भ्रुवोर्घ्राणस्य च य: सन्धि: स भवतीति। विश्वस्य सर्वरूपस्य ज्ञानस्य ईश: = नाथ: विश्वेश: = विश्वनाथ:।' अर्थात् जबालादि शिष्यों ने गुरुजी से पूछा - वरणा क्या है और नाशी क्या है? गुरुयाज्ञवल्क्यजी ने जवाब में कहा- समस्त इन्द्रियों से जो दोष उत्पन्न होते हैं उनको रोकनेवाली निष्प्रभावी बनानेवाली वरणा है और समस्त इन्द्रियों से उत्पन्न पापों को नाश करनेवाली नाशी है। हमारे शरीर में ये कहाँ है? ऐसे पूछे जाने पर गुरुदेव कहते हैं - दोनों भौओं के बीच जहाँ घ्राण का मिलन स्थान है, उस भ्रूमध्य को अर्थात् वरणा + नाशी के मध्य क्षेत्र को वाराणासी कहा गया है। यहाँ पर समस्त ज्ञान अर्थात् ६४ विद्याओं सहित सभी धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराण, न्याय आदि दर्शन शास्त्र, चारों उपवेद, चारों वेद आदि का अनुभव रहित शब्दार्थ ज्ञान अभिव्यक्त होते हैं, अत: इसे विश्वेश या विश्वनाथ और आज्ञा चक्र कहते हैं। यह बिंदु तत्त्व का प्रतीक है। इन्द्र द्वारा अनुभूयमान आनन्द का अनुभव करने का सामर्थ्य तथा संपूर्ण शास्त्रों का शब्दार्थ ज्ञान का प्राप्ति हेतु आज्ञा चक्र के जागरण केलिये परमशिव के रूप में स्थित विश्वेश = विश्वनाथ का पूजा, ध्यान, आदि करें।

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

९. उक्त ८ चक्रों में क्रियाशक्तिरूप देवी और ज्ञानशक्तिरूप देव भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण करके अपने-अपने कार्य का निष्पादन करते रहते हैं और अन्तिम चक्र सहस्रार में पूर्णरूपेण ऐक्यता को प्राप्त करते हैं। अत: इस ८ और १०वीं चक्र के बीचवाले बिंदुविसर्ग चक्र में दोनों समभाग से मिश्रित हैं, जिसे 'अर्धनारीश्वर' कहते हैं, अर्थात् शरीर का दाहिना भाग शिव और बायॉ भाग शक्ति है। इस अर्धनारीश्वर के रूप में विराजमान परमात्मा को 'परल्यां वैद्यनाथं च' शब्दों से कहा गया है। 'परे ब्रह्मणि लीयते या ब्रह्माकारवृत्ति: सा परळी। विद्याऽस्यास्तीति वैद्य:, तेषां नाथो वैद्यनाथ:।' कुछ लोग 'व' के स्थान पर 'ब' उच्चारण करते हैं। सामान्यरूप से जाग्रत अवस्था में बाह्य घट,पट,पुत्र,पत्नी,आदि विषयाकार ही होती है वृत्ति। स्वप्न में जाग्रत अवस्था में अनुभूत विषयों की वासना की सहायता से मन द्वारा कल्पित घट,पट,पुत्र,पत्नी,आदि विषयाकार ही होती है वृत्ति और सुषुप्ति में अज्ञान युक्त सुखाकार होती है वृत्ति। किन्तु निर्विकल्प समाधि में वेदान्त संस्कार युक्त योगी ी ही वृत्ति ब्रह्माकारता को प्राप्त होती है, जिसे परली कहते हैं। समस्त विद्याओं में ब्रह्मविद्या सर्वश्रेष्ठ विद्या है, वह जिसके पास है उसे वैद्य कहा जाता है। वैद्यों का भी नाथ=स्वामी अर्थात् जो केवल परोक्ष ब्रह्मज्ञानवाला ही नहीं अपितु अपरोक्षब्रह्मानुभूति से संपन्न ब्रह्मविद्योगी ही वैद्यनाथ है। यह जीवनमुक्त की पहली अवस्था है और ज्ञान का चौथी भूमि है। इस स्थितिवाले को ब्रह्मवित् कहा जाता है। यह कला का प्रतीक है। इन्द्रादि देवताओं के गृरु बृहस्पति के द्वारा अनुभूत आनन्द का अनुभव करने की सामर्थ्य प्राप्ति केलिये अर्धनारीश्वर के रूप में स्थित वैद्यनाथ का पूजा, ध्यान, आदि करें।

१०. सहस्रार चक्र में शिव और शक्ति का ऐक्य स्वरूप है = शक्ति शिव में लीन है, अर्थात् क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति में विलय होकर केवल ज्ञानरूप से विद्यमान है। परमात्मा का

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

इस विशेषस्वरूप को 'हिमालये तु केदारं' शब्दों से कहा है। 'हिमवच्छीतलानां शान्तानामृषीणामालयः हिमालयः। कं=ब्रह्म, तस्मिन्यदारोपितं इः = कामः, तमज्ञानसहितं दृणाति नाशयतीति केदारः = ब्रह्मविद्वरः।' अर्थात् बर्फ के समान शीतल एवं शान्त स्वभाववाले मन्त्रद्रष्टा ऋषिगण का निवास स्थान हिमालय है। अपने स्वरूपभूत आत्मा ब्रह्म पर आरोपित अज्ञानरूपी कारण सहित कार्यात्मक कामरूपी शत्रु को जो ज्ञानरूपी खड्ग से नाश करता है, वह केदार है, वह ब्रह्मविद्वर है। यह नादबिंदुकला से अतीत अवस्था का प्रतीक है। यही जीवन्मुक्ति की दूसरी अवस्था और ज्ञान की पांचवीं भूमि है। अतः इस चक्र के जागरण से प्रजापति के द्वारा अनुभूयमान आनन्द का अनुभव होता है। उसकी प्राप्ति केलिये शिवशक्त्यैक्य का प्रतीक केदारनाथ का पूजा, ध्यान, आदि करें।

११. इस प्रकार पूरे १० चक्रों का भेदन के पश्चात् प्राप्त होती है धर्ममेघसमाधि की अवस्था, उसको 'त्र्यम्बकं गौतमी तटे' के द्वारा दर्शाया है। गौतमी तट नासिक क्षेत्र को कहते हैं। 'नासा इव, गजस्य शुण्ड इव वा योऽस्ति सो नासिकः। त्रीणि अम्बकानि अक्षीणि यस्य सः त्र्यम्बकं, तस्येश्वरः त्र्यम्बकेश्वरः।' नाक के आकार के समान आकार अथवा हाथी के सूंड के आकार के सदृश आकार में जहाँ गोमती नदी बह रही है उस पुण्य क्षेत्र को नासिक कहते हैं। तीनों आँख क्रियाशील हैं जिसका उसे त्र्यम्बक कहते हैं। ऐसे योगियों का ईश्वर त्र्यम्बकेश्वर है। यह ब्रह्मविद्वरीय का स्थिति है, जो की जीवन्मुक्ति की तीसरी अवस्था और ज्ञान की छठी भूमि है। इस अवस्था में हिरण्यगर्भ = ईश्वर के द्वारा अनुभूयमान आनन्द का अनुभव होता है, जो की एक सोपाधिक संसारी जीवात्मा के द्वारा भोग्य सर्वश्रेष्ठ आनन्द है। इसी का प्रतीक है त्र्यम्बकेश्वर। अतः जो उस सर्वश्रेष्ठ आनन्द का अुभव करने की सामर्थ्य प्राप्त करना

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM

चाहता है वह परमात्मा का प्रतीक त्र्यम्बकेश्वर की पूजा, ध्यान, आदि करें।

१२. मनुष्य के अन्त:करण का आध्यात्मिक उन्नति की अन्तिम अवस्था है सहजसमाधि, जिसमें वह अपने वास्तविक सच्चिदानन्दस्वरूप जीवब्रह्मैक्यत्व की अनुभूति करके अविद्या और उसके कार्यों का पूर्णतया निवृत्तिपूर्वक मुक्त हो जाता है। इस पूर्णमुक्ति को 'घृष्णेश्वरं च शिवालये' के द्वारा बताया गया है। 'शिव:=कल्याणस्वरूपं पूर्णं निर्गुणं निष्क्रियं निरवद्यं निरंजनं ब्रह्म तस्यालय: अनुभूत्यवस्थाविशेष: शिवालय:, वेदान्तस्य मननेन घर्षितानां अत्यन्तसूक्ष्मी कृतान्त:करणनां ईश्वर इव ईश्वरोऽभेदाद्य: सो घृष्णेश्वर:।' कुछ लोग घुश्मेश्वर भी पाठ करते हैं। शिव शब्द का अर्थ है मोक्षस्वरूप निर्गुण निष्क्रिय निर्दोष रागादि से निर्लिप्त परिपूर्ण ब्रह्म, ऐसे तत्त्व का अनूभूति युक्त अवस्था विशेष को शिवालय कहा जाता है। जिन योगियों ने वेदान्त का मनन द्वारा घर्षण करके अपने अन्त:करण को अत्यन्त सूक्ष्म कर लिया है उनका ईश्वर के समान ईश्वर, क्योंकि इस स्थिति में उस ब्रह्म तत्त्व और योगी में कोई भेद नहीं रहता है, अत: वह घृष्णेश्वर है। यही ब्राह्मी स्थिति है, जो की जीवन्मुक्ति की अन्तिम चौथी अवस्था और ज्ञान की अन्तिम सप्तम भूमि है । ऐसी स्थितिवाले ज्ञानी व योगी ही ब्रह्मविद्वरिष्ठ है। इस स्थिति में वह मुक्त पुरुष पूर्ण आनन्द ही हो जाता है, जैसे नदी समुद्र हो जाता है। अत: ऐसा होना चाहते हैं जो वे पूर्ण ब्रह्म का प्रतीक घृष्णेश्वर का पूजा, ध्यान, आदि करें।

Created by demo-version of Universal Document Converter. Full version doesn't add this stamp.
WWW.PRINT-DRIVER.COM